समकालीन हिन्दी भाषा और साहित्य
विविध आयाम

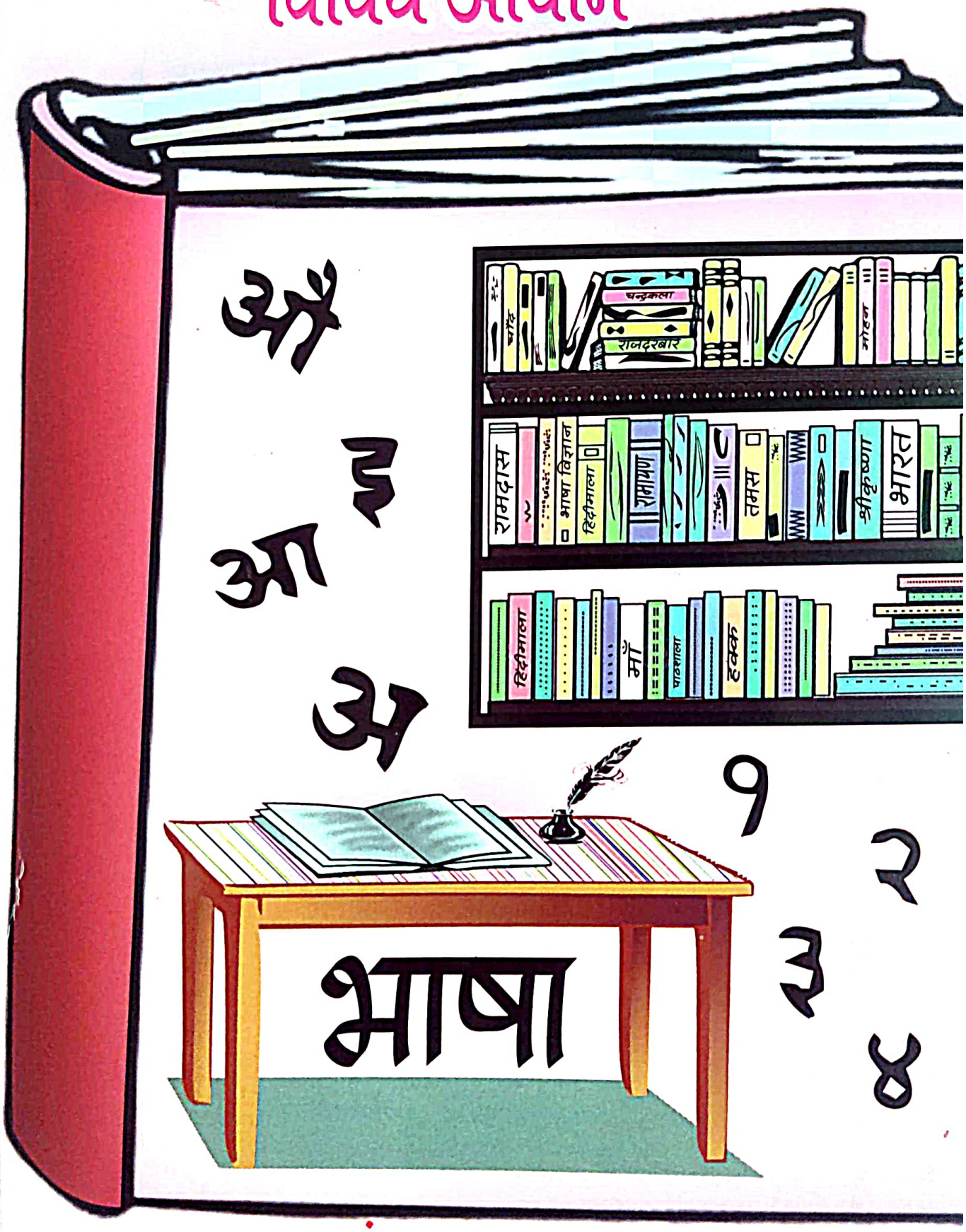

संपादक
डॉ. महानंदा पाटील

समकालीन हिन्दी भाषा
और
साहित्य : विविध आयाम

संपादक
डॉ. महानंदा पाटील

...❖...❖...❖

सह-संपादक
रामकुमार
डॉ. राजशेखर जाधव
डॉ. मीनाक्षी बी. पाटील

आर. के. पब्लिकेशन
मुम्बई

ISBN : 978-93-91458-72-0

Copyright © Reserved

प्रथम संस्करण : 2023

मूल्य : ₹ 1100/-

शीर्षक	Title
समकालीन हिन्दी भाषा और साहित्य : विविध आयाम	**Samkaleen Hindi Bhasha aur Sahitya : Vividh Aayam**
संपादक	Editor
डॉ. महानंदा पाटील	**Dr. Mahananda Patil**
प्रकाशक	Publisher
आर.के. पब्लिकेशन	**R. K. Publication**
1/12, पारस दूबे सोसायटी, ओवरी पाडा, एस.वी.रोड, दहिसर (पूर्व), मुम्बई - 400 068	1/12, Paras Dubey Society, Ovari Pada, S. V. Road, Dahisar-East, Mumbai - 400 068

Phone : 9022 521190 / 9821251190

E-mail : publicationrk@gmail.com

Website : www.rkpublication.in

अक्षर संयोजन : राजेन्द्र मिश्र

virar.mishra63@gmail.com

आवरण : सुनील निंबरे, विद्या उम्मर्जी

मुद्रक : सुमन ग्राफिक्स, मुम्बई - 400011

44. हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श
- डॉ. ममता के. टी. 272

45. चित्रा मुद्गल के कथा-साहित्य में झोपड़पट्टीय दलित जीवन के विविध आयाम
- डॉ. महादेवी वि. सुंगारे 278

46. विद्रोह बनाम दलित साहित्य
- डॉ. विलास अंबादास साळुंके 283

47. हिन्दी साहित्य : मानव चेतना के विविध आयाम
- डॉ. गोखले पंचशीला 287

48. आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य में किन्नर विमर्श
- डॉ. सुजाता मगदुम 291

49. इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता में आर्थिक एवं साहित्यिक सम-सामयिकता
- बलराम 295

50. विश्व भाषा में हिन्दी का स्थान
- डॉ. मल्लिकार्जुनय्या जी.एम. 302

51. हिन्दी कहानियों में दलित चेतना
- डॉ. रमेश चव्हाण 307

52. भारतीय पत्रिकाओं में हिन्दी पत्रिकाओं का स्वरूप
- डॉ. बापूराव वी. पाटील 311

53. 'अपने-अपने पिंजरे' में चित्रित दलित जीवन
- डॉ. गंगाधर म. गेंड 316

54. अलका सरावगी के उपन्यास में स्त्री प्रतिरोध का स्वर
- डॉ. नारायण जी. बगली 321

'अपने-अपने पिंजरे' में चित्रित दलित जीवन

- डॉ. गंगाधर म. गेंड

मराठी के दलित साहित्य से प्रभावित होकर हिन्दी में जो आत्मकथाएँ लिखी गई, उनसे हिन्दी साहित्य में एक नया अध्याय जुड़ा। लोगों को यह महसूस हुआ कि हमारे समाज का एक ऐसा बड़ा हिस्सा है, जिसकी जिन्दगी की असलियत का हमें पता नहीं था। कुछ साहित्यकारों को तो यहाँ तक कहना पड़ा कि हिन्दी में लिखा गया अब तक का साहित्य सवर्ण साहित्य है। ऐसे विचारों पर मतभेद हो सकते हैं, लेकिन सच्चाई को बहुत दिनों तक अनदेखा नहीं किया जा सकता। हिन्दी में जो दलित आत्मकथाएँ लिखी गई, उन्हें उपन्यास कहा जा सकता है या नहीं यह प्रश्न भी विचारणीय है यदि इन रचनाओं में कथा तत्व है, आस-पास का जीवन है तो क्या इन्हें आत्मकथात्मक उपन्यास की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता?

दलित साहित्यिकारों के अनुसार दलित-साहित्य दलित अनुभवों की अमूल्य निधि है। दलित अनुभवों की सारी दृष्टि एवं सृष्टि उनके इस साहित्य में समाविष्ट हुई है। दलित साहित्य में भोगे हुए यथार्थ का चित्रण स्वाभाविक रूप में होता है अर्थात् दलित मन ने जो देखा, सोचा, जाना या यू कहें इस मन ने जो भोगा, अनुभव किया उन सबका कभी तीखे रूप में तो कभी कोमलता से इस साहित्य में अंकन हुआ है। दलित सहित्य की वेदना में वेदना नहीं है। वह समूची बहिष्कृत समाज की वेदना है। इसलिए इस वेदना का स्वरूप सामाजिक है। अतः कहा जा सकता है कि यह साहित्य दलित समाज के समूह मन का दर्पण है तथा वर्तमान में यहीं दलित साहित्य दलित मन का आलेख, दस्तावेज गाया, इथियार एवं प्रतीक बना हुआ है। दलित जन की पीड़ा किस रूप में अभिव्यक्त हुई है कुछ रचनाओं के विश्लेषण में इसे देखा जा सकता है।

'अपने-अपने पिंजरे' मोहन दास नैमिशराय की आत्मवृत्तात्मक कृति है। आत्मवृत रचनाओं का प्रारम्भ महाराष्ट्र दलित साहित्य आंदोलन से माना जाता है। हिन्दी साहित्य में भी दलित साहित्य आंदोलन ने अपनी गहरी

पैठ कर ली है। यही कारण है कि आज हिन्दी के समर्थ दलित लेखक पूरी संलग्नता और प्रतिबद्धता के साथ अपने भावों को आकार दे रहे हैं।

'अपने-अपने पिंजरे' मराठी आत्मवृत के आधार पर लिखी गई कृति है, जिसे लेखक ने अपनी जिन्दगी के कटु अनुभवों को ईमानदारी से अभिव्यक्ति दी। यह आत्मकथा लेखक के अकेले की आत्मकथा नहीं है, बल्कि उस दुर्घटनाग्रस्त समाज के भोगे हुए कड़वे अनुभवों की बेबाक कहानी भी है, जिसके बीच उपस्थित रहते हुए अपने जीवन के कुछ वर्ष बिताए है। लेखक के इस प्रस्तुत आत्मकथा में भी 'वही नंगा व कड़वा सच बार-बार उभरा है, जिसे भारतीय समाज की विषम संरचना में छटपटाने जैसी परिस्थितियों में दलित समाज के लोगों ने भोगा है।

इस रचना में लेखक ने जन्म, माँ की मृत्यु, ताई माँ, शिक्षा, सौतेली माँ का नगर पालिका चुनाव लड़ना, कर्फ्यू, विरजों, आम्बेडकर की मृत्यु, रसवन्ती से प्रेम, भागकर बम्बई जाना और वहाँ की एक वेश्या सूजी से प्रेम आदि का चित्रण किया गया है। इस आत्मकथा में एक ऐसे ग्रामीण समाज का चित्रण हुआ है, जिसमें भूख, तड़प, पीड़ा, दुःख, गरीबी, अशिक्षा आदि प्रमुख रूप से विद्यमान हैं। इस यथार्थ चित्रणों से पता चलता है कि हमने किस प्रकार के भारत का निर्माण किया है।

नैमिशराय के इस आत्मवृत्तात्मक उपन्यास में मेरठ के 'चमार गेट' में जन्में, पले-बढ़े हुए बालक मोहनदास नैमिशराय के जीवन की अनेक घटनाएं पढ़ने को मिलती हैं। साथ ही 'चमार दरवज्जा के चमारों के संबंध में भी खासी जानकारी प्राप्त होती है। नैमिशराय का परिवार मेरठ के चमार दरवज्जे में सम्पन्न तो अवश्य है किन्तु कथित अत्यन्त छोटी जाति के वंश से होने से उनका परिवार तथा वह स्वयं भी पीड़ित होते रहे हैं। सवर्ण हिन्दुओं के स्थान पर मुस्लिम नवाबों से उनका शारीरिक, आर्थिक एवं मानसिक शोषण किया गया है। इस संबंध में वे कहते हैं कि "हमारे मुसलमान पड़ोसी भी मजदूरी ही करते थे। उनमें से कोई भी शेख, पठान एवं सैय्यद नही था। उनमें अधिकांश जुलाहे, कलाल, कसाई, अंसारी ही थे किन्तु उनके तेवरों में पठान की प्रवृत्ति कुछ ज्यादा ही थी। बोलने का

लहजा उसी मानसिकता से प्रभावित था वे बात-बात पर हमें चमट्टे कहते थे और महिलाओं को चमट्टी। हम उनकी नजरों में घटिया लोग थे, हमारी जाति की औरतों को तो बार-बार जलील होना पड़ता था। कभी-कभी वे ऐसा सोचते भी थे कि हम उनके रहमो करम पर जिन्दा है।

इससे स्पष्ट होता है कि सभी धर्मों पर जातिवाद का असर ज्यादा दिखाई देता है। यही कारण है कि हिन्दुओं से अलग धर्मान्तरण, बौद्ध, ईसाई और अन्य धर्मों के तथा कथित धार्मिक लोग चमारों के साथ सवर्ण हिन्दुओं के समान ही अस्पृश्यता का ही बर्ताव करते थे। दलितों की सबसे बड़ी समस्या यही है कि दलित चाहे गाँव में रहे, चाहे शहर में, सवर्णों की बस्ती में रहे, चाहे मुस्लिम बस्ती में उसे इन सब में घोर अपमान को भोगना या सहना मानो उसकी नियति थी।

इस आत्मवृत्तात्मक उपन्यास में मोहनदास ने अपनी जीवन की घटनाओं का ही वर्णन नहीं किया है, अपितु अपने भोगे हुए यथार्थ को अभिव्यक्त करने की चेष्टा की है। साथ ही उन्होंने अपने दीन-हीन दशा के ऐतिहासिक कारणों के विश्लेषण का भी प्रयास किया है, जिसमें लेखक कभी अपनी अकर्मण्यता पर गहरे क्षोभ और ग्लानि की अभिव्यक्ति करता है तो कभी-कभी सवर्ण मानसिकता द्वारा किये जा रहे भेदभाव वाली निरर्थक प्रवृत्ति पर आक्रोश व क्रोध व्यक्त करता है अपने जाति या वर्ग विशेष की दीन-हीन दशा का विश्लेषण करते हुए लेखक यह लिखता है कि "हम लम्बे समय से अपमान सहते आये थे, पर गुनाहगार कदापि नहीं थे हम हारे हुए थे, जिन्हें आर्यों ने जीतकर हमें हाशिये पर डाल दिया गया था। हमारे पास अंग्रेजों द्वारा दिये गये तमगे, मेडल, पुरस्कार नहीं थे हमारे पास या कड़वा अतीत और जख्मी अनुभव मन और शरीर पर चोट पड़ती तो वे ही जख्म हरे हो जाते। सदियों से गर्दिशों में रहते-रहते हम अपने इतिहास से कट गये थे हम अपनी संस्कृति भूल गये थे। हमारे हथियार भोयरें हो गये थे। पहले हम उजड़े, फिर बस्तियाँ, बाद में संस्कृति।'

नैमिशराय यहाँ पर दलितों के इतिहास एवं उन्हें दलित किन परिस्थितियों में और क्यों कहा गया इस पर अपने विचारों को उजागर करते

हैं। किन परिस्थितियों में दलितों को समाज से तिरस्कृत तथा बहिष्कृत होना पड़ा, जिसके परिणाम स्वरूप बहिष्कृत समुदाय अपनी संस्कृति एवं सभ्यता को चाहकर भी बचा नहीं सका। इसका ऐतिहासिक विश्लेषण एवं तटस्थ आंकलन करते हुये वे आगे लिखते हैं- "हजारों वर्षों से टूटने-बिखरने का यही क्रम चल रहा है बस्तियों से उजड़कर मैदान, खेत, पहाड़, सड़क, फुटपाथ और न जाने हम कहाँ-कहाँ पसरे। हमने आसरा ढूंढ़ा पीढ़ी-दर-पीढ़ी दुःख सहने की प्रक्रिया से हम दास बनते चले गये। हमारी गिनती गुलामों में की जाने लगी। वे मालिक बन बैठे हमारी औरते उनकी रखैल बनीं। हम अपनी औरतों से कटते गये।" दलितों की वर्तमान दीन-दशा के पीछे अतीत में हुए अत्याचार, शोषण एवं अन्याय का कारण स्पष्ट झलकता है। हजारों वर्षों से हो रहे अत्याचार एवं अमानवीय व्यवहार के कारण उन्हें समाज में समानता का अधिकार दिया ही नहीं गया। यही कारण है कि उनकी संस्कृति, उनका इतिहास उनसे विस्मृत होने पर उन्हें गुलाम व दास के रूप में जीवन व्यतीत करना पड़ा और साथ ही समाज में उनका स्थान अत्यन्त नीचा होता चला गया। इस सामाजिक विभिषिका का ऐतिहासिक विश्लेषण कितना कटु है इसका बयान करना कठिन है यह दलित के दर्द का आख्यान है..... यह दर्द व्यक्तिगत नहीं सामाजिक है लेखक स्पष्ट रूप से कहता है- "कैसा निर्मम था यह इतिहास और संस्कृति... जिसे हम लम्बे समय से ओढ़ते बिछाते चले आये। इससे स्पष्ट होता है कि दलितों का दुःख एवं दर्द व्यक्तिगत न होकर सामाजिक है। क्योंकि भारतीय सवर्ण हिन्दू समाज द्वारा उनके साथ अत्यन्त ही निर्ममता एवं कठोरता के साथ व्यवहार होता आया है अपने ऊपर हो रहे अत्याचार व शोषण को वे सदियों से चुपचाप सहन भी करते आये हैं।

इस प्रकार यह केवल आत्मकथा ही नहीं है बल्कि यह तो अमानुषिक कृत्यों, गुलामी, गरीबी, यातना की दशाओं की चिरंतन गाथा है। इस उपन्यास में लेखक ने हिन्दू समाज व्यवस्था में दलित की दीन-हीन पराधीन स्थिति को पहचानते हुए उच्चवर्गीय समाज द्वारा दलितों के शोषण दमन और उत्पीड़न की जटिल प्रक्रिया का वर्णन तो किया ही है ज्योतिबा

फुले के इस वाक्य को भी पूर्ण रूप से चरितार्थ किया है जो सहता है वही जानता है जो जानता है वही कह सकता है। गुलामगिरी में ज्योतिबा फुले द्वारा उक्त पंक्ति में दलितों की पीड़ा, दुःख एवं संत्रास को चित्रित किया गया है। इनका मानना है कि जो व्यक्ति शोषण, दमन, अत्याचार एवं अन्याय को सहता है वही उसके मर्म को समझ सकता है वही महसूस कर सकता है और जिस वेदना और तीव्रता के साथ शोषित अपनी पीड़ा और दर्द को व्यक्त कर सकता है दूसरा नहीं कर सकता। 'अपने-अपने पिंजरे' में इस सहने और सहते जाने तथा उसके बीच से उठे आक्रोश की आवाज प्रस्फुटित हुई है।

सहायक प्राध्यापक
एस. बी. कला एवं के.सी.पी. विज्ञान
महाविद्यालय, विजयपुर

❖❋❖